जेल में बंद एक महिला पत्रकार की आपबीती

मैने 31 साल के अपने जीवनकाल में कभी नहीं सोचा था कि मुझे जेल से आपको संबोधित करने का अवसर मिलेगा. गाजीपुर जेल में यह मेरा पांचवां दिन है. जेल के महिला वार्ड में पिछले चार दिनों का अनुभव बहुत कुछ सिखाने वाला है. ये सीखें इस देश के बारे में भी हैं, और मेरे बारे में भी. जेल में गांधी की 'सत्य के प्रयोग' पढ़ते हुए ये सीखें और संघनित हो उठती हैं. मैं देखती हूं कि शासकों के बदल जाने से शासन बहुत नहीं बदलता, अगर शासकों की मंशा न बदले. यह बात मैं किसी पार्टी या सरकार विशेष के संबंध में नहीं कह रही हूं.

दस पदयात्रियों, जिनमें एक पत्रकार भी शामिल है, को पकड़कर जेल में डाल दिए जाने के पीछे शासकों की मंशा आखिर क्या हो सकती है ? हमारे पैदल चलने से यदि देश या राज्य में शांति भंग की आशंका है तो क्या इस सवाल पर विचार नहीं किया जाना चाहिए कि प्रदेश की शांति कितनी भंगुर है !

जेल के भीतर दो बैरकों में 40 से अधिक महिलाएं हैं जबकि एक बैरक मात्र छह बंदियों के लिए है. यहां के अधिकारी तक मानते हैं कि जेल में पूरी व्यवस्थाएं नहीं हैं. अधिकतर महिलाएं दहेज प्रताड़ना के मामले में कैद हैं. कुछ महिलाएं ऐसी भी हैं जिनका मामला पांच सालों से चल रहा है पर अब तक फैसला नहीं हुआ है. पांच साल तक निरपराध जेल में रहना ? कानूनन जब तक जुर्म साबित नहीं होता, तब तक आप निरपराध ही तो हैं. यदि न्यायालय इन बंदियों को निरपराध घोषित कर दे तब ? इनके पांच साल कौन लौटा सकेगा ?

यहां कुछ ऐसी भी महिलाएं हैं जिनकी जमानत के आदेश हो चुके हैं पर उनकी जमानत कराने वाला कोई नहीं. इनकी जिम्मेदारी आखिर किसकी है ? क्या किसी की नहीं ? जेल में आकर आप एक ऐसे भारत से मिलते हैं जो बेहद लाचार है. ये सब महिलाएं मुझे उम्मीद की नजरों से देखती हैं. इन्हें लगता है कि मैं इनके लिए कुछ कर सकूंगी. ये कहती हैं कि जैसे आपको बिना जुर्म जेल लाया गया है हमें भी लाया गया है. अगर एक भी महिला सच कहती है तो ये हमारी न्याय-व्यवस्था की असफलता है.

यह व्यवस्था किस तरह चींटी की सी चाल चलती है इससे तो आप सभी वाकिफ होंगे ही, पर इस गतिहीनता का असर जिन पर पड़ता है वे ही जान सकते हैं कि यह कितनी हिंसक और अमानवीय है. खास तौर पर आत्महत्या कर मर जाने या मार दी जाने वाली बहुओं के मामले में बहुत काम किये जाने की जरूरत है. सही काउंसलिंग कराये जाने की जरूरत है. परिवारों में आपसी सौहार्द का न होना पूरे परिवार को कहां तक ले जा सकता है. एक परिवार के पांच-छह लोग जेल में हैं, परिवार के एक सदस्य

की जान जा चुकी है. छोटे बच्चों से उनका भविष्य छिन जाता है और वकीलों को मोटी-मोटी फीस वर्षों तक देनी होती है. अक्सर अशिक्षा और अज्ञान के कारण स्थितियां और विषम हो जाती हैं. वकीलों, पुलिस और न्यायालय कर्मचारियों की भी ट्रेनिंग इस तरह नहीं होती कि कम से कम नुकसान में जल्द से जल्द न्याय दिलाया जाए और मध्यस्थता के जरिये चीजें निपटा दी जाएं.

गांधी प्रिटोरिया में अपने पहले मुकदमे से मिली सीख के बारे में लिखते हैं – 'मैंने सच्ची वकालत करना सीखा, मनुष्य स्वभाव का उज्जवल पक्ष ढूंढ़ निकालना सीखा. मनुष्य हृदय में पैठना सीखा. मुझे जान पड़ा कि वकील का कर्तव्य फरीकैन के बीच खुदी खाई को भरना है. इस शिक्षा ने मेरे मन में ऐसी जड़ जमाई कि मेरी बीस साल की वकालत का अधिक समय अपने दफ्तर में बैठे सैकड़ों मुकदमों में सुलह कराने में ही बीता. इसमें मैंने कुछ खोया नहीं. पैसे के घाटे में रहा यह भी नहीं कहा जा सकता. आत्मा तो नहीं गंवाई.'

हमारे वकीलों, अधिकारियों व प्रशासन व्यवस्था से जुड़े अन्य कर्मचारियों को इससे सीखने की जरूरत है. कल की एक घटना का जिक्र यहां करूंगी. कल दोपहर यहां के सांसद अफ़ज़ाल अंसारी सत्याग्रही साथियों से मिलने आए. महिला बैरक को भी संदेश मिला कि वे यहां भी आएंगे. उनकी विजिट से पहले बैरक की सभी महिलाओं को काफी अभद्र भाषा में कहा गया कि दीवारों की ईंटों के बीच की दरारों में फंसे लकड़ियों के टुकड़े पर सूखते कपड़ों को हटा लिया जाएं और सभी महिलाएं (यहां पर उनका कागज पर लिखा स्पष्ट नहीं है). मेरे कपड़े भी इन लकड़ियों पर थे. कपड़े सुखाने के लिए इन बैरकों में कोई अन्य व्यवस्था नहीं है. मेरे कपड़े भी एक साथी कैदी ने हटा दिए. लेकिन सांसद अंदर नहीं आए, मुझे उनसे मिलने के लिए जेल अधीक्षक के दफ्तर में ले जाया गया. मुझे इस तरह अन्य कैदियों के साथ रखे जाने पर सांसद ने आपत्ति जताई. मेरे लिए अलग व्यवस्था करने की हिदायत दी, बाहर से कंबल, तकिया, बिछावन भी भेजा. पर अन्य कैदियों का क्या ?

बैरकों में किसी तरह की सुविधा नहीं है. 12-ए में नहाने के लिए स्नानागार तक नहीं है. खुले में नहाना पड़ता है. कैदियों के घर से जो सामान आता है या जो उनके कपड़े आदि हैं, उन्हें रखने के लिए प्लास्टिक के झोलों को दीवार में खूंटियों पर टांगने भर का सहारा है. किसी तरह की अलमारी या लॉकर की कोई व्यवस्था नहीं है. सुबह का नाश्ता रोज नहीं मिलता. हफ्ते में दो दिन पाव रोटी और दो दिन भीगे चने. बाकी दिन सिर्फ चाय.

इस तरह की अव्यवस्था मुझे लगता है, अधिकतर जेलों में होगी. एक और समस्या जो मैं देख पाती हूं, वह है संवाद की. जेल में अपनी जमानत और अन्य सूचनाओं की राह देख रही बंदिनियों तक तुरंत सूचना पहुंचाने की कोई व्यवस्था नहीं है. अगले दिन, जब तक परिवार का कोई सदस्य उन तक नहीं पहुंचता, तब तक वे आशंकाओं और उम्मीद के भंवर में डूबती-उतराती रहती हैं. रोती हैं. जेल सुधार व न्याय-व्यवस्था में सुधार मुझे इस समय की सबसे बड़ी ज़रूरत मालूम होते हैं.

साभार- https://satyagrah.scroll.in/ से